International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 3; Issue 4; July 2017; Page No. 13-15

केदारनाथ अग्रवाल के काव्य में सामाजिक यथार्थ का अनुशीलन

नीता अग्रवाल

शोधार्थीनि, हिन्दी विभाग, म0 ज्यो0 फु0 रूहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली, उत्तर प्रदेश, भारत

सरांश

मार्क्सवादी विचाराधारा से अनुप्राणित प्रगतिवादी काव्य–धारा के प्रमुख कवि केदारनाथ अग्रवाल ने सामाजिक यथार्थ को अपने काव्य का इष्ट बनाया हैं। उनकी कवितायें अनुभव व संवेदनाओं की दीप्ति से जगमगाती, नेह की खुशबू से महमहाती सामाजिक यथार्थ को स्वर देतीं हैं। वे सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति में विश्वास करते हैं और यथार्थ को ही रचना–कर्म का उद्देश्य मानते हैं। उनका साहित्य अपने युग की वास्तविकता का सच्चा प्रतिनिधि है और आने वाले युगों के लिये प्ररेणास्रोत का कार्य करता है। केदार जी ने संसार की वस्तुपरकता से आत्मपरकता स्थापित कर उसे समाज को सम्प्रेषित किया है। यही कारण है कि उनकी कलम से निःसृत विचार जब समाज के सामने आते हैं तो केदार के न रहकर समस्त जन के विचार बन जाते हैं। केदार जी का काव्य जीवन के विकास और संघर्षों के यथार्थ चित्रण पर आधाारित है, जिसका संबंध सामाजिक परिस्थितियों एंव प्रगतिशील प्रवृत्तियों से है। वे इस समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार, घूसखोरी को जनता के मन से समूल नष्ट करना चाहते हैं। उन्होंने सामान्य जन–जीवन के प्रति अपने काव्य में जैसी सजगता और जागरूकता दर्शायी है, अन्यत्र दुर्लभ है। सामाजिक यथार्थ की निश्छल अभिव्यक्ति को सर्वबोधगम्य बनाने वाले कवि केदारनाथ अग्रवाल जी की रचनायें वर्तमान के परिप्रेक्ष्य में भी प्रासंगिक हैं, अतः उनके काव्य में सामाजिक यथार्थ का अनुशीलन करना ही प्रस्तुत शोध–पत्र का प्रमुख प्रयोजन है।

मूल शब्द: केदारनाथ अग्रवाल, मार्क्सवाद, सामाजिक यथार्थ, प्रगतिवाद।

प्रस्तावना

सत्यम् शिवम् सुन्दरम् की मूल अवधारणा से अभिसिंचित, अनुप्राणित साहित्य ने मानव जीवन को एक सार्थक एवं सम्यक् दिशा दी है। साहित्यकार अपने सामाजिक परिवेश से अत्यन्त गहराई से सम्बद्ध होता है। वह समाज में घट रही घटनाओं से प्रभावित हुये बिना नहीं रह सकता। साहित्यकार अपने युग में जीता है और उसका भरसक प्रयास रहता है कि अपनी रचनाओं में युग जीवन को अभिव्यक्ति दे। गंभीर सृजन और कथ्य के प्रति समपर्ण तभी संभव हो पाता है, जब जिन्दगी के अनसुलझे सवालों और दिल के जज्बातों को छूने की पुरजोर कोशिश होती है। रचनाकार की रचनाधर्मिता तभी कृति का आकार लेती है, जब वह अपनी अभिव्यक्ति को दिल खोलकर शब्दों में पिरोता है।

सामाजिक यथार्थ की निश्छल अभिव्यक्ति को सर्वबोधगम्य बनाने वाले कवि केदारनाथ अग्रवाल मार्क्सवादी विचाराधारा से अनुप्राणित प्रगतिवादी काव्यधारा के प्रमुख हस्ताक्षर हैं। हिन्दी साहित्य में मार्क्सवाद की अभिव्यक्ति को 'प्रगतिवाद' की संज्ञा दी गई। पेरिस में सन् 1935 ई0 में 'प्रोग्रेसिव राइटर्स एसोसिएशन' नामक अन्तर्राष्ट्रीय संस्था का उदय हुआ। जिसकी एक षाखा सन् 1936 ई0 में सज्जाद जहीर और डा0 मुल्कराज आनन्द के प्रयत्नों से भारत में स्थापित हुई और प्रगतिषील लेखक संघ की स्थापना हुई। जिसका पहला अधिवेषन लखनऊ में सन् 1936 ई0 में प्रेमचन्द की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ।

केदारनाथ अग्रवाल सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति में विष्वास करते हैं और यथार्थ को ही रचना–कर्म का उद्देष्य मानते हैं। उनका साहित्य अपने युग की वास्तविकता का सच्चा प्रतिनिधि है ओर आने वाले युगों के लिये प्ररेणास्रोत का कार्य करता है। उनके काव्य की प्रषस्ति में प्रख्यात प्रगतिवादी समीक्षक डॉ0 रामविलास शर्मा ने लिखा है –

> **''सामाजिक यथार्थ, प्राकृतिक परिवेष, श्रृंगार और प्रेम केदार की कविता के ये तीन मुख्य विषय हैं। इन तीनों का आपसी संबंध बराबर गहरा होता गया है। देष के प्रति, प्रकृति के प्रति, पत्नी के प्रति, एक साथ ऐसी प्रगाढ़ निष्ठा मुझे किसी दूसरे देषी–विदेषी कवि में देखने को नहीं मिली है। ''[1]**

कथ्य के प्रति समर्पित श्री केदारनाथ अग्रवाल का जन्म 1 अप्रैल, सन् 1911 को बांदा (उत्तर प्रदेष) जिले की बबेरू तहसील के कमासिन नामक स्थान पर हुआ। केदारनाथ के पिता जी हनुमान प्रसाद अग्रवाल काव्य और कला प्रेमी थे तथा 'मान' उपनाम से काव्य रचना करते थे। केदार जी की काव्य–प्रेरणा स्वयं इनका जीवन–दर्षन रहा है। कवि केदारनाथ पेषे से वकील थे एवं बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। उनका पहला काव्य संग्रह 'युग की गंगा' के प्रकाषन काल से लेकर 'कुहकी कोयल खड़े पेड़ की देह' तक के लगभग पचास वर्षों की काव्य–सृजन प्रक्रिया पर गौर करें तो पायेंगे कि उनकी कविताओं में सामाजिक समस्याओं के प्रति लगाव उत्तरोत्तर बढ़ा है। केदारनाथ अग्रवाल की कविताओं में सामाजिक यथार्थ समूचे परिवेष के साथ विद्यमान है, जो तत्कालीन इतिहास को समझने के लिए बहुमूल्य दस्तावेज हैं। उन्होने यथार्थ जीवन के निकट जाकर धरातलीय सत्य को अभिव्यक्त किया है। वे जन–जीवन के प्रति सजग और जागरूक हैं। केदार जी का समाज के प्रति प्रेम उनकी निम्न पंक्तियों में दृष्टव्य है–

> **''मुझे प्राप्त है जनता का स्वर,**
> **वह स्वर मेरी कविता का स्वर,**
> **मैं उस स्वर से,**
> **काव्य प्रखर से,**
> **युग–जीवन का सत्य लिखूँगा,**
> **मैं उस धन से नहीं बिकूँगा।'' [2]**

उनकी सामाजिक चेतना का सबल पक्ष यही है कि पहली बार कविता में मानव के व्यक्ति स्वातंत्र्य पर बल दिया गया। उन्होंने जीवन की यथार्थ भूमि पर खड़े होकर काव्य सत्य का अन्वेषण

किया। जिस जीवन–सत्य और जीवन–सौन्दर्य को उन्होंने अपने काव्य में अभिव्यक्त किया है, उसे वैयक्तिक स्तर पर उपलब्ध किया है। यथार्थ की निष्छल अभिव्यक्ति को सर्वबोधगम्य बनाने वाले कवि केदारनाथ अग्रवाल जी की रचनायें वर्तमान के परिप्रेक्ष्य में भी प्रासंगिक है।

केदार जी का काव्य जीवन के प्रति आस्था जगाता है। जब सन् 1986 में 'सम्मानः केदारनाथ अग्रवाल' परिमल प्रकाषन इलाहाबाद द्वारा आयोजित हुआ, षहर के ही नहीं बाहर से भी लोग उन्हें सुनने के लिए उमड़ पड़े। उन्हें कई सम्मानों व पुरस्कारों से नवाजा गया। 'सोवियत नेहरू भूमि' व अनेकों उपाधियों से विभूषित केदारनाथ अग्रवाल का कवित्व सराहनीय है। वे कहते हैं–

''कविताई न मैंने पाई न चुरायी। इसे मैंने जीवन जोतकर किसान की तरह बोया ओर काटा है।'' [3]

केदार जी का काव्य जीवन के विकास और संघर्षों के यथार्थ चित्रण पर आधाारित है, जिसका संबंध सामाजिक परिस्थितियों एंव प्रगतिषील प्रवृत्तियों से है। वे इस समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार, घूसखोरी को जनता के मन से समूल नष्ट करना चाहते हैं। उनके अनुसार कवि को एक वैज्ञानिक, राजनीतिज्ञ व अर्थषास्त्री की तरह होना चाहिए। तभी वह देषहित में अपना योगदान दे सकता है। भ्रष्टाचार को उजागर करती उनकी पंक्तियाँ निम्न हैं–

''स्वधर्म हो गया है वेतन का बचाना,
ऊपर की आमदनी का पैसा खाना,
ज्यादा से ज्यादा नाजायज कमाना,
तरह से तरकीब से पकड़ में न आना,
क्या खूब है जमाना।'' [4]

केदार जी ने संसार की वस्तुपरकता से आत्मपरकता स्थापित कर उसे समाज को सम्प्रेषित किया है। यही कारण है कि उनकी कलम से निःसृत विचार जब समाज के सामने आते हैं तो केदार के न रहकर समस्त जन के विचार बन जाते हैं। कहीं–कहीं उनका जीवन ही साहित्य में रूपान्तरित होकर आया है। अपने गद्य–संकलन विवेक विवेचन की भूमिका में भी उन्होंने सामाजिक यथार्थ को ही अभिव्यक्ति दी है :–

''मुझे वकील होने के बाद जीवन को अधिक निकट से समझने और पहचानने का अवसर मिला और यह जाना कि जीवन को उसकी समग्रता में समझना और अन्तर्विरोधों के कारणों का पता लगाना चाहिए और ऐसा करते–करते सत्य का नैकट्य प्राप्त करना चाहिए। तभी आदमी में मेरी सघन आस्था उत्पन्न हुई।'' [5]

गरीब और सर्वहारा वर्ग के जीवन का कटु यथार्थ केदार जी की कविताओं का केन्द्र–बिन्दु है। प्रगतिवादी पथ पर चलते हुए केदार जी ने यथार्थ सौन्दर्य, साम्यवादी विचारधारा, मानवतावाद और लोक संस्कृति के वास्तविक सामाजिक उपादानों से कविता को समृद्ध करने का गौरवषाली काम किया है। प्रगतिवादी यथार्थ चेतना को समाज और साहित्य में सम्मानजनक स्थान दिलाने में सफलता पाई है। वे जन–कवि हैं, जनता के चारण हैं। समग्र मानवीय कार्य–व्यापारों के बीच निम्न वर्ग की ओर से अपनी प्रतिक्रिया संघर्ष के रूप में व्यक्त करते हैं। परिर्वतन की आस्था से प्रेरित हो जीवन संघर्ष का आह्वान करते हैं–

''जो जीवन की आग जलाकर आग बना है,
फौलादी पंजे फैलाये नाग बना है,
जिसने शोषण को तोड़ा, शासन मोड़ा है,
जो युग के रथ का घोड़ा है,
वह जन मारे नहीं मरेगा, नहीं मरेगा।'' [6]

केदार जी के अनुसार प्रगतिषील साहित्य के सृजन की आवष्यकता इसलिए हुई कि वह प्राकृत सृष्टि के और परिकल्पनात्मक सृष्टि के समकक्ष, एक ऐसी साहित्यिक सृष्टि दे सके, जो वैज्ञानिक सत्य से सम्बद्व हो। नाना प्रकार की रूढियों, अंधविष्वासों और निजी अभिरूचियों से मुक्त हो। मानवीय चेतना को ऐसे ही विकसित करके संसार की आम जनता सुखी और समृद्व हो सकती है। इसलिए वे सदा सत्य के पक्षधर रहे–

''लिखूंगा मैं फिर–फिर वही
सत्य की कही
सौ फीसदी सही,
नहीं–नहीं.....
असत्य की कहीं नहीं।'' [7]

केदारनाथ अग्रवाल पूँजीवाद का विरोध और उसका ध्वंस करना चाहते हैं, क्योंकि यह पूँजीवाद व्यवस्था सामाजिक असमानता, अत्याचार, दमन और शोषण की नींव है। वे परिर्वतन में आस्था लेकर क्रान्ति का आह्वान करते हैं। क्रान्ति के सन्दर्भ में श्रमिक वर्ग की संघर्षरत भूमिका को पहचानते हैं। केदार जी श्रमिक वर्ग की दषा से भली–भाँति परिचित हैं। 'युग की गंगा' नामक काव्य–संकलन में संकलित उनकी कविता 'कोयले' में कोयला श्रमजीवी का प्रतीक है, जो क्रान्ति की चिंगारी से शिव–नेत्र की भाँति दहकने लगता है–

''जल उठे हैं तन बदन से,
क्रोध में शिव के नयन से।
खा गये निशि का अंधेरा,
हो गया खूनी सवेरा।'' [8]

कवि केदार अपने स्वाभिमान और स्वतंत्रता को सबसे अधिक मूल्य देना चाहते हैं। सामाजिक व्यवस्था से व्यथित इनके मानस को सामाजिक दुःख दैन्य ने अन्दर तक आन्दोलित किया था। उन्होंने अपनी कविता के माध्यम से शोषितों में क्रान्ति के बीज बोकर भावनात्मक एकता शक्ति का संचार किया। उनका काव्यात्मक चिन्तन जन–जीवन के प्रति सजग और जागरूक हैं। कवि केदार षान्ति के पक्षधर हैं, बन्दूकों और बमों के सहारे जो लोग आजादी पाने की बात करते हैं, केदार जी के अनुसार यह रास्ता ही गलत है–

''यह बात ही गलत है
विश्वास ही गलत है–
बन्दूक को चलाकर
हम शान्ति पा सकेंगें,
अणु–बम गिरा–गिरा कर,
हम त्राण पा सकेंगे,
आजाद रह सकेंगे
निर्माण कर सकेंगे।''[9]

धरातलीय सत्य केदार जी ने यथार्थ जीवन के निकट जाकर को अभिव्यक्त किया है। उनके काव्य में नये समाज के प्रति, नये जीवन–मूल्यों के प्रति आस्था है, साथ ही परिर्वतन की ललक भी है। उनकी रचनाओं में सत्य स्वयं मुखरित है, जीवन की विषमतायें किस प्रकार हमारी अच्छी मानसिकताओं पर हावी हो जाती हैं, उसका यथार्थ चित्रण प्रस्तुत कविता में देखा जा सकता है :–

''सड़े घर की गोबर की बदबू से दबकर
महक जिन्दगी के गुलाब की मर जाती है,
रार, क्रोध, तकरार, द्वेष से दुःख से कातर
आज ग्राम की दुर्बल धरती घबराती है।'' [10]

केदार जी की कविताओं में प्रकृति के विविध रूप चित्रित हुए है। यह प्रकृति खेतों, खलिहानों, बाग–बगीचों वाली वास्तविक प्रकृति है। कल्पना लोक का कोई उद्यान नही। प्रकृति उनके काव्य में उल्लासपूर्ण ढंग से व्यक्त हुई है। जब तक उनका मन प्रकृति के सान्निध्य में रहता है नये–नये विचार उनकी लेखनी को अभिभूत कर शब्दों में लिपिबद्ध होते रहते हैं। यह तथ्यपरक है तथा यथार्थ से सम्बद्ध है। इसमें जीवन के अनुभव साफ दिखाई देते हैं। प्रकृति के प्रतीकों का प्रयोग कवि ने जनवादी सिद्वान्त की अभिव्यक्ति के लिए भी किया है। उनकी कविता 'दो जीवन' में कली पूँजीवादी जीवन का प्रतीक है जबकि बबूल सर्वहारा वर्ग का प्रतीक है–

''गरम गरम हव चली अशान्त रेत से भरी।
हरेक पाँखुरी जली, कली न जी सकी मरी।।
बबूल आम ही पला, हवा से वह न डर सका।
कठोर जिन्दगी चला, न जल सका, न मर सका।।''[11]

सामाजिक यथार्थ के अनुषीलन में केदार जी की लेखनी ने बड़ी सफलता पाई है। केदार जी का सौन्दर्य बोध भी यथार्थ की कड़ी धूप से निःसृत है। उन्होने सामाजिक यथार्थ जीवन के निकट जाकर धरातलीय सत्य को अभिव्यक्त किया है। वे जन–जीवन के प्रति सजग और जागरूक हैं। कविता की अतीन्द्रिय भाव–भूमि के बारे में बढ़ा–चढ़ाकर कहे बिना यथार्थ को यथार्थ के ही बोध से पहचानना चाहते हैं। उनके जैसा काव्य में सामाजिक यथार्थ चित्रण अन्यत्र दुर्लभ है। डॉ0 अनुराग मिश्र का कथन दृष्ट्व्य है–

''कवि केदारनाथ अग्रवाल का काव्य सामाजिक जीवन के प्रत्येक स्तर पर दृष्टि रखते हुए उनके प्रगति के लिए नई चेतना और नूतन प्रेरणाएं सम्प्रेषित करता है।'' [12]

उनका आधुनिक समाज के प्रति यथार्थ चिन्तन उनकी काव्य रचनाओं में प्रत्यक्ष देखने को मिलता है। कवि केदारनाथ अग्रवाल की कविताओं में सामाजिक सापेक्षताएं अपनी संपूर्णता के साथ दृष्टिगोचर होती हैं। उनकी संवेदनाएं सामाजिक परिवेष के साथ एकाकार हो शोषित, पीड़ित जनता का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करती हैं। केदार जी का काव्य सामाजिक जीवन के प्रत्येक स्तर पर दृष्टि रखते हुए प्रगति के लिए नई चेतना एवं नूतन प्रेरणाएँ सम्प्रेषित करता है। वे मानव की उत्कट जिजीविषा एवं मानवीय पौरूष में असीम विष्वास करते हैं। केदार जी की रचनाओं में जैसा आवेग, धड़कन और स्पंदन है, वैसा उनके समकालीनों में विरल है। कवि केदारनाथ अग्रवाल अपनी काया में नहीं, अपने सृजन–संसार में आज भी जीवित हैं। सामाजिक यथार्थ की कठोर भूमि पर खड़े रहकर भी उन्होंने जो काव्य सृजन किया है, उसके लिए समाज सदैव उनका ऋणी रहेगा।

सन्दर्भ सूची

1. डॉ0 रामविलास शर्मा, प्रगतिषील काव्यधारा और केदारनाथ अग्रवाल, साहित्य भंडार, इलाहबाद, प्रथम् संस्करण–2011, पृ0–77।
2. केदारनाथ अग्रवाल, कहें केदार खरी खरी, साहित्य भंडार, इलाहबाद, प्रथम् संस्करण–2009, पृ0–128।
3. केदारनाथ अग्रवाल, लोक और आलोक (भूमिका) साहित्य भंडार, इलाहबाद, प्रथम् संस्करण–2009।
4. केदारनाथ अग्रवाल, आग का आइना, साहित्य भंडार, इलाहबाद, प्रथम् संस्करण–2009, पृ0–30।
5. केदारनाथ अग्रवाल , विवेक विवेचना, साहित्य भंडार, इलाहबाद, प्रथम् संस्करण–2010, पृ0–6।
6. केदारनाथ अग्रवाल, फूल नही रंग बोलते है, साहित्य भंडार, इलाहबाद, प्रथम् संस्करण–2009, पृ0–78।
7. केदारनाथ अग्रवाल, बोले बोल अबोल, साहित्य भंडार, इलाहबाद, प्रथम् संस्करण–2009, पृ0–22।
8. केदारनाथ अग्रवाल, युग की गंगा, परिमल प्रकाषन–1947, पृ0–61।
9. केदारनाथ अग्रवाल , बसन्त में प्रसन्न हुई पृथ्वी, साहित्य भंडार, इलाहबाद, प्रथम् संस्करण–2009, पृ0–43।
10. केदारनाथ अग्रवाल, युग की गंगा, परिमल प्रकाषन–1947,पृ0–50।
11. केदारनाथ अग्रवाल, फूल नही रंग बोलते हैं, साहित्य भंडार, इलाहबाद, प्रथम् संस्करण–2009, पृ0–24।
12. डॉ0 अनुराग मिश्र, नागार्जुन एवं केदारनाथ अग्रवाल के काव्य में सामाजिक अभिव्यक्तियां और धारणाएं, साहित्य भंडार, इलाहबाद, प्रथम् संस्करण–2009, पृ–31।